॥ अथ कैवल्यपादः ॥

योग दर्शन के प्रथम पाद में समाधि का वर्णन है, इसलिए उसे 'समाधि पाद' की संज्ञा दी गई है। द्वितीय पाद में समाधि के साधनों की प्रधानता होने से उसे 'साधन पाद', तृतीय पाद में समाधि से प्राप्त विभिन्न सिद्धियों-विभूतियों का विवेचन होने से 'विभूति पाद' कहा गया है तथा चतुर्थ पाद में समाधि के वास्तविक फल कैवल्य अवस्था का विवेचन किया गया है, अतः इसका नाम कैवल्य पाद रखा गया है। विभूति पाद में विभिन्न सिद्धियों की प्राप्ति केवल समाधि द्वारा वर्णित की गई है; किन्तु इस (कैवल्यपाद) में सिद्धियों के अन्य कारण भी बताये गये हैं। उसी प्रसङ्ग से इसका प्रथम सूत्र आरम्भ होता है।

(१६२) जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजाः सिद्धयः ॥ १ ॥

सूत्रार्थ— जन्मौषधिमन्त्रतपः समाधिजाः - जन्म, ओषधि, मन्त्र, तप और समाधि से उत्पन्न होने वाली, सिद्धयः= (पाँच) सिद्धियाँ होती हैं।

व्याख्या— शरीर, इन्द्रियों एवं चित्त में पूर्व की अपेक्षा विलक्षण परिवर्तन आना, उनमें शक्ति संचार होकर और समर्थ बन जाना 'सिद्धि' है, इसके पाँच कारण हैं-

१ जन्मजा सिद्धि— पूर्व जन्मों में किये गये श्रेष्ठ कर्मों के कारण वर्तमान जन्म में कई सिद्धियाँ बिना श्रम के प्राप्त होती देखी जाती हैं। जैसे कपिल, वेद-व्यास, शुकदेव आदि ने पूर्वजन्मों के संस्कार वश विभिन्न सिद्धियाँ बचपन में ही प्राप्त कर ली थीं। यद्यपि प्रत्यक्षतः इतनी कम आयु में उनने कोई विशेष पुरुषार्थ नहीं किया था, तो भी उनकी तेजस्विता उस अल्पवय में भी परिलक्षित होती थी। अस्तु, यह उनका पूर्व पुरुषार्थ था, जो इस जन्म में जन्म के साथ ही फलीभूत हुआ; अतः यह जन्मजा सिद्धि हुई। इसी प्रकार पूर्व कर्मों के फलस्वरूप मनुष्य से देवयोनि पाकर उसमें दिव्य शरीर और अणिमा आदि सिद्धियों को प्राप्त करना भी जन्मजा सिद्धि कहलाती है।

(२) ओषधिजा सिद्धि— जब मनुष्य किसी रसायन या ओषधि के सेवन से शरीर का कल्प कर उसमें विभिन्न शक्तियों का संचार कर जरा-मरण का निवारण कर उसे चिर युवा बना लेता है,तो उसे ओषधिजा सिद्धि कहते हैं। जैसे-च्यवन ऋषि दिव्य ओषधियों का सेवन करके वृद्ध से पुनः युवा हो गये थे। यह शक्ति केवल मनुष्यों में ही नहीं, वरन् वृक्ष-वनस्पतियों, पशु-पक्षियों में भी विकसित की जा सकती है।

(३) मन्त्रजा सिद्धि— जब मनुष्य अद्भुत सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए किसी मन्त्र का आश्रय लेकर सविधि अनुष्ठान करता है, इससे भी इन्द्रियों में विशेष शक्ति तथा चित्त में विलक्षण शक्ति का संचार होता है, तब इसे मन्त्रजा सिद्धि कहते हैं। साधक इन सिद्धियों से आकाश-गमन आदि शक्तियाँ प्राप्त कर लेते हैं। तन्त्र शास्त्रों में इनका विस्तृत वर्णन मिलता है।

(४) तपजा सिद्धि— शास्त्रोक्त तप का विधिपूर्वक अनुष्ठान करने अथवा अपने धर्म और कर्त्तव्य पालन के लिए बड़े से बड़े कष्ट सहर्ष सहन कर लेने से शरीर, इन्द्रियों और चित्त के विकार भस्मसात् हो जाते हैं, जिससे चित्त एकाग्र हो जाता है और इससे विलक्षण शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं। ऐतिहासिक ग्रंथों में कई जगह ऐसी सिद्धियों का उल्लेख भी है। भारद्वाज और विश्वामित्र जैसे ऋषियों द्वारा इस प्रकार की अनेक सिद्धियों का प्रयोग करके भी दिखाया गया है।

(५) समाधिजा सिद्धि— धारणा, ध्यान एवं समाधि के अभ्यास से, शरीर, इन्द्रियों एवं चित्त में जो अद्भुत परिवर्तन होता एवं अपूर्व शक्तियों का संचार होता है, उन्हें समाधिजा सिद्धि कहते हैं। इस सन्दर्भ में सूत्रकार ने तृतीय विभूति पाद में सविस्तार वर्णन किया है॥ १ ॥

कुछ भाष्यकारों ने जन्मजा आदि सिद्धियों के विषय में कहा है कि पूर्वजन्म के समाधि अभ्यास से ही इस जन्म में सिद्धि मिलती है । अतः वह समाधिजा सिद्धि के अन्तर्गत ही है। इसी प्रकार जन्म, ओषधि आदि को निमित्त मात्र माना है। अतः इन सिद्धियों के अन्तर्गत शरीर, इन्द्रियों और चित्त में विलक्षण शक्ति का उत्पन्न होना परिणाम का अन्तर भर है। इसी को जाति-अन्तर परिणाम भी कहा गया है, अतः अगले सूत्र में जात्यन्तर परिणाम विवेचित किया गया है—

(१६३) जात्यन्तरपरिणामः प्रकृत्यापूरात्॥ २॥

सूत्रार्थ— जात्यन्तरपरिणामः = यह जात्यन्तर परिणाम अर्थात् एक जाति से दूसरी जाति में बदल जाना है, जो; प्रकृत्यापूरात् = प्रकृति की पूर्णता से होता है।

व्याख्या— शरीर, इन्द्रियों व चित्त आदि का ओषधि, मन्त्र, तप आदि से दूसरी जाति (स्थिति) में परिवर्तित हो जाना जात्यन्तर परिणाम कहलाता है। प्रकृति की पूर्णता होने से यह परिणाम होता है। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश — ये पञ्चभूत प्रकृति हैं। ये ही देह के कारण रूप हैं, इन्द्रियों का कारण अस्मिता अर्थात् अहंकार है। इनके अंगों का अनुप्रवेश ही 'आपूर' कहलाता है और इस 'आपूर' के कारण ही उक्त (जात्यन्तर) परिणाम होता है। इसका अभिप्राय यह है कि योगी के शरीर, इन्द्रियों आदि के पहले वाले रजोगुण, तमोगुणयुक्त भाव हटकर उनके स्थान पर जैसे-जैसे सतोगुणी भाव आते जाते हैं, वैसे-वैसे शरीर, इन्द्रियाँ, चित्त आदि विलक्षण शक्ति से युक्त होते जाते हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही नया बन जाता है, यही जात्यन्तर परिणाम है। जिस प्रकार अग्नि की एक चिनगारी को सूखे तिनके पर डालने से अग्नि के अपूर्व (जो पूर्व में कम थे) अवयवों का समूह प्रचण्ड हो जाता है। इसी प्रकार योगी के रजोगुण, तमोगुण नष्ट होकर सतोगुण अवयव वृद्धि को प्राप्त होते जाते हैं। यह जात्यन्तर प्रकृति-आपूर से हुआ करता है। श्री वामन भगवान् और श्रीकृष्ण के स्वरूप का एकदम विराट् हो जाना प्रकृति के अवयवों के प्रवेश के कारण सम्भव हुआ था। इसी प्रकार महर्षि अगस्त्य द्वारा समुद्र पान करना, प्रकृति के अवयवों के अपगम (निकल जाने) के कारण ही सम्भव हुआ था। बाल शरीर का युवा हो जाना, वट बीज का वृक्ष बन जाना भी इसी प्रकृति आपूर द्वारा होना मानना चाहिए॥ २॥

अब प्रश्न यह उठता है कि जन्म, ओषधि आदि जो निमित्त कारण हैं, इनके द्वारा प्रकृति किस तरह 'आपूर' (पूर्णता) कर देती है। क्या ये (उपर्युक्त जन्मादि कारण) प्रकृति के नियोजक (संचालक) हैं। इसका उत्तर अगले सूत्र में देते हैं—

(१६४) निमित्तमप्रयोजकं प्रकृतीनां वरणभेदस्तु ततः क्षेत्रिकवत्॥ ३॥

सूत्रार्थ— निमित्तम् = निमित्त कारण (योगज धर्म), प्रकृतीनाम् = प्रकृतियों को, अप्रयोजकम् = संचालित करने वाला नहीं है, ततः = उससे, तु = तो (मात्र), क्षेत्रिकवत् = क्षेत्रिक (किसान) की तरह, वरणभेदः = अवरोध का छेदन किया जाता है।

व्याख्या— योगज धर्मादि निमित्त (जन्म, ओषधि, तप आदि) प्रकृति को चलाने वाले (प्रवर्तक) नहीं हैं; क्योंकि वे तो प्रकृति के कार्य हैं और कार्य, कारण का संचालक नहीं हो सकता। जिस प्रकार घट अपने दण्ड, जल, मिट्टी, चक्र आदि कारणों का कार्य है, अतः घट इन सभी का प्रवर्त्तक नहीं हो सकता। इसी प्रकार जन्म, ओषधि आदि शरीर-इन्द्रिय-चित्त में अभीष्ट परिवर्तन हेतु मात्र अवरोध को दूर करते हैं। शेष कार्य तो स्वतः हो जाता है। जैसे कोई किसान एक खेत से दूसरे खेत में पानी ले जाना चाहता है, तो वह पानी ले जाने वाले मार्ग के अवरोध (रुकावट) भर को दूर करता जाता है। जल को चलाने का कार्य कृषक नहीं करता, वह तो स्वाभाविक रूप से होता है। पूर्व वर्णित निमित्तों के सन्दर्भ में भी यही बात

पं. तपोनिष्ठ श्रीराम शर्मा आचार्य, एवं माता भगवती देवी शार्मा, योग दर्शन, युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, मथूरा, संवत् 2057, पृष्ठ 93 से 94।